"मोक्ष संस्कार"

सेवा सत्संग स्पर्श धारा

प्रकाशक: Vibrant Pushti - Vadodara
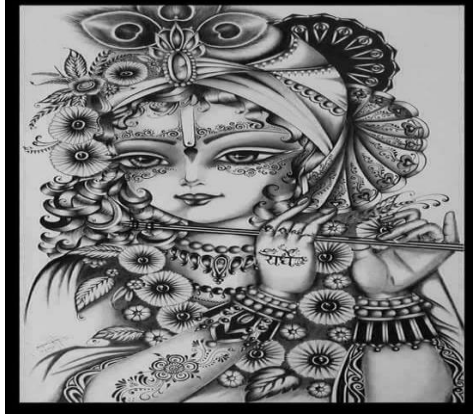
Vibrant Pushti

53, सुभाष पार्क सोसायटी

संगम चार रास्ता

हरणी रोड - वडोदरा - 390006

गुजरात - India

Email: vibrantpushti@gmail.com

Mobile: +91 9327297507

" मोक्ष संस्कार "

बहोत गहराई से चिंतन और अध्ययन करके कहता हूँ - मृत्यु कौन नही चाहता है? हमारे वेद उपनिषदों, गीता, श्रीमद्भागवत, महापुराण, महाभारत और रामायण आदि कोई ऐसा धर्म संप्रदाय

का शास्त्र भी पुकार पुकार कर कहता है - मृत्यु आवश्यक है। हमारे हर सांस्कृतिक अवतारों के चरित्रों भी देखें - हर चरित्र मृत्यु से जुड़ा ही है।

मृत्यु क्या है?

मृत्यु जीवात्मा का शरीर से छूट जाना, मनुष्य जीवन में अध्यात्मक से पहचाने तो यह जीवात्मा का बंधारण कर्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय, प्राण, अंत:करण चतुष्टिय अंत:करण, तन मात्रा, अविध्या, काम, और कर्म से सूक्ष्म और कारण शरीर है, जो परमअंशी अर्थात परमात्मा को जीवात्मा के रूप में व्यक्त कर सके, अनुभूति पा सके, मोक्ष प्राप्त कर सके।

हर जीव को अपने कर्म अनुसार और परमात्मा की कृपा से जो कर्म फल भोगने के लिए जो शरीर मिलता है वह जीव को अपने कर्म फल की अवधि समाप्त होने पर यह जीव को वह शरीर का त्याग करना पड़ता है, अर्थात यही सूक्ष्म और कारण सहीत जीव अपनी परमअंशी एकात्म यात्रा के लिए आगे निकल पडता है उन्हें मृत्यु कहते है। जीव कला संपन्न जब यह स्थूल शरीर का त्याग करती है उन्हें मृत्यु कहते है। किसी भी एक शरीर का विस्मरण उन्हें मृत्यु कहते है। स्वाभाविक ब्रह्मावाद प्रच्युति अर्थात प्रमाद - अध्यास, प्रमाद का अर्थ है अज्ञान।
अज्ञान मृत्यु। कर्म मृत्यु। कामना मृत्यु। अध्यास मृत्यु।

मृत्यु की जन्म तिथि क्या है?

जो जन्म की जन्म तिथि है वो ही मृत्यु की तिथि है।

यह शरीर ही मृत्यु ग्रस्त है तो उनकी प्राप्ति ही क्यों होती है?

क्योंकि हम अपने आत्मा स्वरूप को अमृत मृत्युंजय नही जानते है।

मृत्यु कितने प्रकार से होती है?

मृत्यु दो प्रकार से होती है १ - सैद्धांतिक २ - असैद्धांतिक

सैद्धांतिक - मृत्यु जीवात्मा का शरीर से छूट जाना, मनुष्य जीवन में अध्यात्मक से पहचाने तो यह जीवात्मा का बंधारण कर्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय, प्राण, अंत:करण चतुष्टिय अंत:करण, तन मात्रा, अविध्या, काम, और कर्म से सूक्ष्म और कारण शरीर है जो परमअंशी अर्थात परमात्मा को जीवात्मा के रूप में व्यक्त कर सके, अनुभूति पा सके, मोक्ष प्राप्त कर सके। हर जीव को अपने कर्म अनुसार और परमात्मा की कृपा से जो कर्म फल भोगने के लिए जो शरीर मिलता है वह जीव को अपने कर्म फल की अवधि समाप्त होने पर यह जीव को वह शरीर का त्याग करना पड़ता है, अर्थात यही सूक्ष्म और कारण सहीत जीव अपनी परमअंशी

एकात्म यात्रा के लिए आगे निकल पडता है उन्हें मृत्यु कहते है। जीव कला संपन्न जब यह स्थूल शरीर का त्याग करती है उन्हें मृत्यु कहते है।

असैद्धांतिक –किसी भी एक शरीर का विस्मरण उन्हें मृत्यु कहते है।
स्वाभाविक ब्रह्मावाद प्रच्युति अर्थात प्रमाद – अध्यास, प्रमाद का अर्थ है अज्ञान।
अज्ञान मृत्यु। कर्म मृत्यु। कामना मृत्यु। अध्यास मृत्यु।

हम क्या समझते है – मृत्यु डर है! मृत्यु भय है! मृत्यु अशुभ है! मृत्यु अगम्य है! मृत्यु निम्न है! मृत्यु घृणित है! मृत्यु निष्ठुर है! मृत्यु कठोर है! मृत्यु अन्यायी है! मृत्यु बेईमान है! मृत्यु दुष्ट है! मृत्यु अघटित है! मृत्यु दयाहीन है! मृत्यु शाप है! मृत्यु पाप है! मृत्यु अक्षम्य है! मृत्यु दुःख है! मृत्यु अमंगल है! मृत्यु दोषित है! मृत्यु अकल्पनीय है! मृत्यु क्रूर है! मृत्यु अधर्मी है! मृत्यु विकृत है! मृत्यु अमानवीय है! मृत्यु असंस्कृत है! मृत्यु शुद्र है! मृत्यु अभद्र है! मृत्यु अनिष्ठ है!

क्यूँ भयावह लगता है मृत्यु?

जन्म से आनंद, जो जन्मता है वह अपना है, निज है, खुद का है, अंतरंग है, श्रेष्ठ आत्म उत्स है, आत्मज है, आत्मज्ञ है। जो सदा निकट है, सदा साथ है, सदा पास है, सदा एक है, सदा अंदर है, सदा सदा है। जो न अलग है, न भिन्न है, न विच्छेद है, न विघटित है, न विलग है, न दूर है। अर्थात पूर्णत एक – पूर्णत साथ है।
यह कभी बिछड़े! यह कभी छूटे! यह कभी न हो! यह कभी नष्ट हो! यह कभी चल बसे! यह कभी आकस्मिक न हो! यह कभी वास्तविक नष्ट हो! यह कभी अस्तित्व से मिट जाये! यह सदा न हो! यह जो ऐसे समय में चल बसे हो! यह जो ऐसी परिस्तिथी में सदा के लिए न रहे हो! यह जो अकल्पिनीय से विलग हो! हाँ! एक सत्य है – कभी भी कैसे भी किसिकों चल बसना है, छूटना है, जाना है – कहीं – हाँ! कहीं जो नही पता।

जो कभी हमारा है वो हमारा था वह जाता है। जन्म निश्चित है पर मृत्यु अनिश्चित है। यही अनिश्चितता हमें पूर्ण रुप से झकझोर देने वाली असाधारण घटना है।

मृत्यु इतना आकस्मिक है जिससे हमारी आज की मान्यता, आज के विचार, आज का समाज, आज के कर्मकांडी ब्राह्मण और रीति रिवाज हमें डरावना और भयरूप कर देते है। जो बार बार और हर कर्मकांड प्रक्रिया में ऐसी ऐसी बातें, कथा, वार्ता और द्रष्टांत देते है जो भयावह कर देते है। पर सत्य तो सत्य है – मृत्यु एक सत्य है। इससे न डरना चाहिए न भयभीत होना चाहिए। क्या हम पापी है? क्या हम दुष्ट है? क्या हम शापित है? क्या हम दोषित है? क्या हम निर्लज्ज है? क्या हम शूद्र है? क्या हम निम्न है? जो हमें डरना – भयभीत होना!

जो निकटतम साथीओं को कष्टमय, व्याकुल और असह्य परिस्तिथी में धकेल देता है। यही अंत का स्वीकार करना मनुष्य जीवन की सर्वाधिक मर्मस्पर्शी ज्ञान और भावना का अति वेदना पूर्ण सत्य है।

यही ही असह्य वेदना को धर्म आवरणी रुप संस्कार से नियमन कर ले तो वेदना आशीर्वाद स्वरूप, कृतज्ञ स्वरूप, सन्मान स्वरूप, ऋण स्वरूप, सद्गति स्वरूप, श्रद्धांजलि स्वरूप, सेवक स्वरूप, आत्मीय स्वरूप, स्वजन स्वरूप परम भगवदीय कृतकृत्य में परिवर्तित हो जाता है और मृत्यु उत्सव में परिणामित कर्म फल श्रेष्ठ हो जाती है।

यही तो सर्व श्रेष्ठता है यह अंतिम संस्कार का है। यही ही समय - यही ही संजोग - यही ही परिस्तिथी को हम संस्कृत कर दे तो यह मृत्यु अलौकिक हो जाता है - संस्कार हो जाता है - यज्ञ हो जाता है - आशीर्वाद हो जाता है - श्रेष्ठ हो जाता है - सद्गत हो जाता है - मुक्त हो जाता है - पवित्र हो जाता है - विशुद्ध हो जाता है।

संस्कार - मानव जीव या मनुष्य जीव जब भी जन्म धरता है उसी क्षण से वह ऐसे कौटुम्बिक और सांस्कृतिक बंधन से बंध जाता है जो उन्हें वही कुटुंब के रीति रिवाज - सामाजिक रीति रिवाज और वह भूमि के रीति रिवाज की संस्कृति से जुड़ जाता है। यही रीति रिवाज और संस्कृति को उन्हें उनकी आखरी सांस तक निभाना रहता है।

आज के समय में हम जैसे जैसे उम्र, शिक्षा, सामाजिक रीति रिवाजों से बड़े होते जाते है ऐसे ऐसे हमारे धर्म शास्त्रों के अनुसार हममें संस्कारों का सिंचन, उन्हें निभाने का महात्म्य, उनकी न्यायात्मक मान्यता से ही जीवन घड़ना है और अपनाना होता है।

हमारे हिंदु शास्त्रों अनुसार हमें सोलह संस्कारों से शिक्षित और सिंचित किया जाता है जो सदा कौटुम्बिक या सामाजिक प्रसंगों आधारित प्रदान किया जाता है। जो हम आनंद, सुख प्रतिष्ठा से उजवते है, निभाते है।

कृतार्थ जीवन चरित्रों से,
आनंद जीवन उत्कृष्टों से,
धर्म शास्त्र शिक्षितों की जीवन प्रणाली से,
जीवन अनुभूत योग्य नियमन जागृतता से,
सत्य के आचरण से,
जो जो सैद्धांतिक समयानुसार कर्मकांड बंधारण जीवन पद्धति शिक्षित और संस्कृत रची जाती है, न्यायिक योग्य धारा धोरण नियमन शासन करते है, जो जीवन को योग्य, सम्यक, स्वतंत्र, शुद्ध, पवित्र, विश्वासजन्य, सत्याधीन, सिद्धांतधीन, निस्वार्थ, निःकलंक, निसंदेह, न्यायिक, वैज्ञानिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, शासनिक, सुखमय, आनंदमय, आत्ममय करे उन्हें **संस्कार** कहते है।

जैसे जैसे समय - काल बहता गया यही सैद्धांतिक कर्मकांड बंधारण पद्धतिमें मान्यता, बदलाव, वैज्ञानिकता, श्रद्धा-अंधश्रद्धा का प्रभाव थोपने लगा और मन घडत कहानी घड़ने

लगी, अर्धसत्य शैक्षणिक धार्मिक रीति रिवाज जानते जानते दिखावा स्वरूप प्रतिष्ठा स्थापने लगे उसी क्षण से यह संस्कार आडंबर हो गया - आधुनिक प्रथा हो गई। जैसे तैसे वैसे ऐसे यह परिस्तिथी स्वीकार्य करने लगे, अपनाने लगे।

सच हम बहोत तुटले है, फूटले है, अस्थिर है, अधूरे है, अज्ञानी है, अविचारी है, अहंकारी है, लज्जित है, बेशरमी है, द्रष्टिहीन है, अशिक्षित है, अपकृति है, भ्रष्ट है, नि:वर्णीय है, कलंकी है, अभद्र है, क्रूर है, अभिमानी है, निम्न आचरणीय है।

क्या हम ऐसे समझते है की यूरोप - अमेरिका के लोग क्या ऐसे संस्कार, विधि, प्रथा, रिवाज में मानते है? अपनाते है? करते है?
नही मानते है, नही अपनाते है और नही करते है। तो हम क्यूँ?

यह विचार करना, यह मानना, यह समझना बहोत गलत है, अधूरप है, अनिर्णीयी है, अमान्य है, अस्वीकार्य है। वे लोग भी मानते है, अपनाते है, करते है, स्वीकार्य है, सांस्कृतिक है। जगत के कोई भी मानव जाती यह संस्कार की अवहेलना नही करता है, नही तरछोडता है, नही विस्मृतता है, नही ठुकराता है, नही अंधत्वता है, नही अस्वीकारता है। वैज्ञानिकता से वो स्वीकारते है, अपनाते है, मानते है, करते ही है। हाँ! न उनके कोई कर्मकांड निधि है या कर्मकांड विधि है, पर कोई सूत्र है, क्रिया है, समझ है, निष्ठा है, रीति है जो उनको ऐसी ही कोई सैद्धांतिक रीति से निभाते है।

आज पश्चिमीय देश में भी स्मशान गृह और चर्च के निकट भूमि निखात की व्यवस्था है, वोह भी एक विधि अनुसार अपनाते है। "HELOVIN" उनके पूर्वजों की यादों में श्रद्धांजलि और तर्पण करते है। इससे यह प्रमाण भूत है की जगत के हर मानव यह क्रिया की योग्यता को समझते है और अपनाते है, इससे ऐसा नही समझना चाहिए की वोह लोग समाज सुधारक है, समय समय की विचारसरणी वाले है, हमसे वधु ज्ञानी और आधुनिक है।

सही में तो हम श्रेष्ठ और अति ज्ञानी और वैज्ञानिक है की हम परम श्रेष्ठ नीति और रीति से जीवन संस्कार से हमारा जीवन व्यतार्थ करते है।

हाँ! इतना अवश्य है की हमारी संस्कृति आध्यात्म से जुडी है इसीलिए हम आध्यात्मिकता से जुडे हमारी सर्व श्रेष्ठ विशुद्धता, पवित्रता और वैज्ञानिक धर्म अनुसार प्रथा और रिवाज से करते है, जो सर्वत्र से योग्य और सिद्ध है - प्रमाणीक है।

मृत्यु का स्वीकार आजकल सामान्यत् या साधारणत् क्यूँ है?

चाहे कितना एकात्म हो, एकत्व हो, प्रेम हो, प्रीत हो, गाढ़ जुड़ान हो, सर्वथा निकट हो, सर्वथा साथ हो तो भी क्षण भर के बाद केवल जागतिक हो, आडंबर हो, दिखावा हो, जैसे श्री प्रभु की इच्छा! जैसा नसीब! जैसा भाग्य! जैसा प्रारब्ध! जैसा काल! जितना जीवन! जितना ऋण! जितनी लेनदेन! ये तो सत्य है की एक दिन तो सबको जाना ही है! जैसा कर्म! होनी को कौन टाल सकता है! श्री प्रभु को जो सही लगा!

क्यूँ?

कभी कभी जो अंतिम संस्कार आता है तो समयानुसार, प्रतिष्ठानुसार और कौटुम्बिक विचारोंनुसार, वडिलोपार्जित, गौर ब्राह्मण आज्ञानुसार निभाते है। क्यूँकि ऐसे समय में न तो हमें यह संस्कार की समझ होती है - अधुरी समझ होती है - उनके कौटुम्बिक विचारधारा अनुरूप मान्यता में ग्राह्य करके मौन धरते साथ साथ करते रहते है।

सत्यनिष्ठा से यह उचित नही है, ऐसी विचारधारा ही हमें और हमारा जीवन को छिन्न भिन्न करते है, हम हमारे धर्म, ज्ञान, जीवन, शिक्षा, संस्कार और संस्कृति को नष्ट करके असमंजस, अधूरापन और कुसंस्कार की ओर धकेलते है, हम कौटुम्बिक और सामाजिकता से छिन्न भिन्न हो जाते है, ऐसे संस्कारों सिंचित शिक्षण से वंचित हो कर जीवन और अपने वारसदारो को दिशाशून्य समय की धारा में अकेले झुंझुम ने धकेल देते है।

इसीलिए तो आज जो भी संस्कार से हमें सिंचित होना है उससे विपरीत हम वंचित होते जा रहे है, और संस्कार का मूल्य हम पा नही रहे है। यह हमारी वारसाई बदनसीबी है। यही संस्कारों की वंचितता से हम अपने आप को रोगी, भोगी और कलंकित करते है।

इसिलए संस्कार जगाना - संस्कार पाना - संस्कार अपनाना - संस्कार समझना - संस्कार निभाना हमारा श्रेष्ठ कर्तव्य है।

सही में मृत्यु कितना आवकार्य है!

१° मृत्यु की सच्चाई से व्यक्ति सदा खुद जागृत रखता है।

२° मृत्यु से जीवात्मा को नवीन तक उठती है।

३° मृत्यु की सत्यता से व्यक्ति अहंकारी नहीं होता है।

४° मृत्यु अमीरी गरीबी का भेद मिटाता है।

५° मृत्यु जीवन की परिवर्तनता घडती है।

६° मृत्यु जो शरीर बंधनो से बंधा है, उन्हें छुड़ाता है।

७° मृत्य शरीर की योनि फेर बदल करती है।
८° मृत्यु व्यक्ति के भूतकाल पर पडदा डाल देती है।

९° मृत्यु आत्मा की अमरतत्वता का सभान कराती है।

१०° मृत्यु से अपने साथी व्यक्तिमें हिम्मत और विश्वास की बुनियाद नींव रखती है।

११° मृत्यु परमात्मा की विभूति का अनुभव कराती है।

१२° मृत्यु परमात्मा का स्वरूप है।

हमारे संस्कारो में यह अंतिम संस्कार निधि में जो मृतक व्यक्तिके शरीरको दाह अर्थात अग्नि को समर्पित करते है, क्यूँ?

१° एक स्थान पर स्थिर रूप से न बसे हुए की शक्यता - जो मृतक और मृतक के अवशेषों को साथ साथ ले जाना बहोत कठिन था - इसीलिए अग्नि दाह शक्य था।

२° कोई शत्रु द्वारा मृतक को अपवित्र न करदे - इसीलिए अग्नि दाह शक्य था।

३° मृतक व्यक्ति की कोई कामना जो कभी प्रेतत्व से भयभीत करदे, जो अग्नि से वह भस्म हो जाता है - इसीलिए अग्नि दाह शक्य था।

४° मृतक व्यक्ति रोग या कोई विकृतता या कोई अपंगता ग्रस्त हो, जो नि:सहनीय हो - इसीलिए अग्नि दाह शक्य था।

५° धार्मिक और शास्त्रोक्त विश्वास है जो अग्नि देव है जो दिव्य है। जीते जीते कहीं धर्म अनुस्थान, संस्कार अनुस्थान, उत्सव अनुस्थान करते है और किये होते है जिसमें अग्नि की प्राधान्यता निरूपित है, जो आहुतियों देवलोक में बसे देवताओं को समर्पित है जिससे हमारा जीवन पवित्र और शुद्ध है यही ज्ञान भाव श्रेष्ठता को अपनाते हुए, यही समझते है के हमारा यह मृतक परिजन स्वर्गारोहण से मृतक की आत्मा यम लोक में नवीन देह प्राप्त कर सकता है, पितृओं और पूर्वजों में सम्मिलित हो सकता है, ऐसे आविस्कारों जो गौरव पूर्ण - तेजोमय से - सन्मान से - श्रेष्ठता से - योग्यता से सद्गति पामे, देवलोक पामे, मुक्ति पामे, मोक्ष पामे, परमात्मा से एकात्मता पामे - इसीलिए अग्नि दाह शक्य था।
कहीं धर्म संस्थापको में जल-निखात, भूमि-निखात, गुहा-निखात, या ऐसे ही खुले मैदान में छोड़ना, या कुवे-निखात आदि करते रहते है, जिससे जो शरीर जो अंग शायद रोगी था, अशुद्ध था, खंडित था, विकृत था, अयोग्य था, दु:खी था, असहाय था, अघटित था, आदि आदि उन्हें गति प्राप्त होती है, शुद्धता प्राप्त होती है, नूतनता प्राप्त होती है, नव निर्माणता प्राप्त होती है, यह श्रध्धेयना हमारी उच्चता है। क्यूँकी जिसने जन्म पाया उन्हें मृत्यु तो कभी भी पाना ही है और वोह भी कोई भी योग प्रकार से, कोई भी वेदना संवेदना से, कोई भी सार्थ पुरुषार्थ से, कोई भी समय और रीति से।

हाँ! और जो छोटी उम्र के व्यक्तित्व का देहांत होता है तो उन्हें भूमि निखात अर्थात भूमि को समर्पित करते है, भूमि में एक सही जगह में विधि अनुसार गाढ़ते है। जो शरीर पाँच महाभूत तत्वों से रचा है उनमें एकरस करके उन्हें फिर से अपनी योग्य गति के लिए संचलित करते है।

यह भी एक वैज्ञानिक और धार्मिक अंतिम संस्कार है जिनमें भूमि को समर्पित करके यह सिद्ध करते है की यह अंकुर को - यह बीज को श्रेष्ठता से फिर से उगाना - जन्माना जो

वह भी अपनी जीवन जन्म गति के पुरुषार्थ में अपने जीव को अग्नि संस्कार पाते श्रेष्ठता प्रस्थापित करें।

हिन्दु शास्त्रोक्त प्रणाली अनुसार मृतक के शरीर को दाह अर्थात अग्नि को समर्पित करते है उसका यथा योग्य और संस्कृत संस्कार कारण एक ही – यह अंतिम संस्कार को हिन्दु धर्म संस्थापन समाज यह संस्कार को यज्ञ समझती है।

वैज्ञानिक सिद्धांत है – जो सर्व ज्ञानी, वैज्ञानी, प्रज्ञानी ने योग्य ठहराया है की जो भी कोई शक्ति है वह आकाश की ओर या हमारी उपर है। इसीलिए सर्व जो भी आत्मीय प्रार्थना या नमन क्रिया करते है, तो सदा उपर की ओर ही अपने सर्व श्रेष्ठ ह्रदयस्थ को स्वीकार करते है। तो हमारी हिंदु संस्कृति प्रणाली में अग्नि दाह में जो अंतिम दाह क्रिया का अग्नि उपर की ओर ही उठता है जो हम सर्वे गर्व से समझते ही है की हमारा आत्मीय व्यक्तित्व ने ब्रह्मत्व पाया, सद्गति पायी, परमात्मा से एक हुआ।

यही तो श्रेष्ठता है हमारे संस्कार की, हमारी धर्मता की, हमारी वैज्ञानिकता की। हमारे सर्व श्रेष्ठ ऋषिओ, महर्षिओ, वेदांतिओ, और श्रेष्ठीओ जो सदा अग्नि के उपासक थे और है, जिन्होने सिद्ध किया है अग्नि सत्य, विशुद्ध, पवित्र और सर्व मूल तत्वों में श्रेष्ठ है।

हमें भी यही परम तत्व पाना है। इसीलिए हर योग्य क्रिया में अग्नि को प्रज्वल्लित करके ही उन्हें साक्षी समझते ही, उन्हें तेजोमय करते ही हमारी और हमारी आसपास की सारी नकारात्मा को नष्ट करके ही योग्यता प्रदान करनी है।

ॐ असतो मा सद्गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मा अमृतं गमय।
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

मेरी गति और मति असत्य से सत्य की ओर सद्गत करे
मेरे अज्ञान और अंधकार को प्रकाश की ओर गम्य करे
मेरे हर साधारण मृत्यु को श्रेष्ठ अमर पुरुषार्थ की ओर गति करे

हमे यह जानना सर्वर्था उचित है की हमारा अंग और शरीर क्या है? क्यूँ है? कैसी रचना है?

यह कोई हाड मांस और चमड़ी का पिंजर या पुतला नही है, जो ऐसे ही चलता फिरता रहे, इधर उधर घूमता रहे, उपर नीचे धसड्ता रहे, रोग ढोंग से भरता रहे, गंदगी मे रगदौडता रहे, अधर्म से पोषता रहे, अज्ञान से भटकता रहे, स्वार्थ से मरता रहे, घिन्नता से भीसता रहे, लहू, अंग, तन से बेचता रहे, निच हरकतों से निचोड्ता रहे, निचता से भोगता रहे।

हमारा अंग और शरीर कहीं सर्वोच्चता, श्रेष्ठता, दुर्लभता से योग्य संसाधन है। जो जीव को ऐसे पुरुषार्थ कर्मो से सिंचता है, वृद्धता है संस्कारष्टता है जो जीव अपनी योग्यता को, अपनी सार्थकता को सुनिश्चिता प्रदान करते करते सच्चिदानंद की ओर गति करने, पाने, एकात्म होने का सर्वसिद्धांत युक्त साधन है। यह शरीर कर्मेन्द्रिय पंचक, ज्ञानेन्द्रिय पंचक, प्राण पंचक, अंत:करण चतुष्टिय अंत:करण पंचक, तन मात्रा पंचक, अविध्या पंचक, काम पंचक, और कर्म पंचक से सुश्रुत है।

हमारा यह जो मानव शरीर है जो बाह्य हिस्से में पंच कर्मेन्द्रिय और पंच ज्ञानेन्द्रिय को व्यक्त करने के संस्थान है, और अभ्यंतर अर्थात भीतरी आंतर हिस्से में पंच प्राण और पंच अंत:करण चतुष्टिय अंत:करण को व्यक्त करने का संस्थान है, अभिव्यंग की अभिव्यक्ति अभिव्यंजक के अधीन होती है, अभिव्यंजक के तारतम्य से अभिव्यंग की अभिव्यक्ति में तारतम्य होता है।
इसका अर्थ हुआ स्थूल शरीर में सूक्ष्म शरीर को व्यक्त करने का संस्थान है, यह सूक्ष्म शरीर कारण शरीर का अभिव्यंजक संस्थान है, जैसे गाढ़ी नींद में सूक्ष्म शरीर का विलय माना जाता है उसे अविद्या कहा जाता है उसे कारण शरीर कहा जाता है।

यही कारण शरीर जीवात्मा का अभिव्यंजक संस्थान है और जीवात्मा परमात्मा का अभिव्यंजक संस्थान है। अर्थात जिस शरीर में जीवात्मा है - जीव है उस शरीर में उसके शुभाषु कर्म के फल स्वरूप रहने की जो अवधि है वो बित जाने पर अर्थात जिन जिन कर्मो के फल स्वरूप वर्तमान शरीर की प्राप्ति हुई है उन कर्मो का उतने अंशो मे फल भोग कर प्रारब्ध क्षीण हो जाता है, प्रारब्ध अर्थात अभुक्त कर्म जो परमात्मा की प्रेरणा से फल प्रद सिद्ध होने लगे है फलोन्मुक्त हो कर फल प्रदान करने लगे है उन्हें प्रारब्ध कहते है।

योग दर्शन के अनुसार और वेदांत शास्त्र के अनुसार प्रारब्ध के अनेक फल है पर मुख्य रूप से तीन फल है - जाती, आयु और भोग। जाती का अर्थ होता है जन्म, आयु का अर्थ होता है श्वासोछश्वास की अवधि - श्वासोछश्वास का निश्चित कोटा, भोग का अर्थ होता है प्रारब्ध पर्यंत सुख प्रद दु:ख प्रद व्यक्ति वस्तु और उसके सेवन से प्राप्त सुख की और दु:ख की अनुभूति।

जितने कर्मो का फल भोगने को यह शरीर मिला है उसमें जितने भोग और भोग्य पदार्थो को प्रकट करने की क्षमता है वो दे दे अब यह शरीर में जीवात्मा रहने योग्य प्रारब्ध न रह जाय उस समय जीव उस शरीर का त्याग करता है।

पर प्रारब्ध के फल स्वरूप यह शरीर है इससे यह सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर सहित जीव तत्व कूच कर देता है, जिस भोग को भोगने के लिए जीवन प्राप्त हुआ था जिन जिन कर्मो के फल स्वरूप यह शरीर प्राप्त हुआ था, उन कर्मो का भोग क्षीण हो जाने पर जीव यह शरीर का त्याग करता है, पर उसका दो शरीर सूक्ष्म और कारण शरीर रह जाते है।

जो यह जीव है दो रहे हुए सूक्ष्म और कारण शरीर सहित छोडने के लिए बाध्य हो जाता है अंतर्यामी परमात्मा की प्रेरणा से ये शरीर का त्याग करता है उसीका नाम मृत्यु है।

संस्कार विधि

हमारी मान्यता – हमारा कुटुंब – हमारी ज्ञाती – हमारा समाज – हमारे पाड़ोशी – हमारे मित्र – हमारे वडील और हमारे गोर की समझ – आज्ञा – मार्गदर्शन ही हमारा यह परिस्तिथी का संस्कार है। समझ नसमझ और असमंजस में ही यह विधि करते रहते है – निभाते रहते है प्रतिष्ठा की खातिर, अपनाते है साथ रहने की खातिर – मोभा की खातिर, आज्ञा पालक खातिर – मान मर्यादा खातिर – होता है – रहता है – चलता है – अधिक ज्ञानी खातिर – समाज सुधारक खातिर – आधुनिक विचार धारा खातिर –दिखावा खातिर – अमान्यता खातिर – कौटुंबिक उद्वेग खातिर – विज्ञान खातिर – नादानी खातिर – अंधश्रद्धा खातिर – अपमान खातिर – रुढिचूसत्ता खातिर – धर्म खातिर – जाती वाद खातिर – ज्ञाती के बंधन खातिर – करते रहे – निभाते रहे – चलते रहे।

हम कहीं ऐसा समझते है कि जो भी मन में आये वो विधि या जो भी कोई जो भी कहे ऐसे करते करते जो भी संपन्न करे बिना समझ और बिना ज्ञान यह उचित नही है, साथ साथ वह लोक मान्यता प्रेरित है जो अयोग्य और दोषित है।

कोई भी संस्कार हम लोक मान्यता प्रेरित करेंगे वह संस्कार नही है पर केवल कोई प्रतिश्ठित प्रस्थापित करने का ढंग है व्यवहार क्रिया है, इसे संस्कार में परिवर्तित नही किया जा सकता है।

नहीं नहीं! ऐसा नहीं! **हम जन्म पाते है, तो कुछ तो योग्यता है – कोई तो सिद्धांत है – कोई तो विज्ञान है – कोई तो सत्य है – कोई तो धर्म (संचालन – नियमन) है। चोककस है। प्रमाणित है। संस्कृत है। निधि है। विधि है। सिद्धि है। संस्कार है।**

कैसे और कितने भी प्रश्न उठे या जिज्ञासा जागे या सोचे या विचार विमश करें या समझने का यत्न करें या शिक्षित संशोधन करें या आवश्यक सुधार करने की अपेक्षा या योग्य प्रथा का निर्माण करें यह अचूक योग्य और प्रमाणित सत्यता की ओर प्रयाण ही हमारा जन्म निर्देश है।

मृत्यु को प्राप्त हुआ व्यक्ति को किस कारण कुश, गाय का मूत्र गोबर, तिल आच्छादित भूमि पर सुलातें है?

गोबर भूमिकों सबसे पहले लीपना चाहिए, तदनंतर उसके ऊपर तिल और कुश बिछाना चाहिए, जिससे भूमि पवित्र और शुद्ध हो जाती है, जो मंडलन भूमि कहा जाती है – जो भूमि पर केवल देवताए बिराजते है – ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, लक्ष्मी आदि देवगण हो, जिससे मृतक की सद्गति होती है।

तिल बहोत पवित्र है – तिल बिछाने से असुर, दानव, दैत्य और अशुद्ध तत्वों दूर हो जाते है, जिससे शुद्धता प्रकट होती है। कुश पवित्र प्रकृति है – वनस्पति है, जो सदा शुद्ध और पवित्र है। यह सर्वे पदार्थ मुक्तिदायिनी है। इसीलिए यही सर्व पदार्थ आवश्यक है। उसके बाद

आतुर या मृतक व्यक्ति को सुला देना चाहिए, जिससे वह मृतक सर्व दोषों से मुक्त हो जाता है।

मृतक व्यक्ति के दोनों पैर दक्षिण दिशा की ओर क्यूँ कर दिये जाते है?

वैज्ञानिक द्रष्टि से तुलना करे तो दक्षिण दिशा ही एक ऐसी दिशा है जो गुरुत्वाकर्षण की मात्रा मृतक के लिए क्षीण है। दक्षिणायन सृष्टि की ऐसी गति है जो सदा सर्जन के लिए उत्कर्ष है। जो मृत्यु हुआ है उनका पुन:सर्जन आवश्यक है। मृतक को दक्षिणायन की अवस्था उन्हें नव सर्जन की गति में सरलता प्राप्त हो।

मृतक के आगे पुत्र -पौत्रादि क्यों खड़े रहते है?

मृतक के जो रक्त-संबंधी है वह मृतक की हर संकेतता प्राप्त कर सके, समझ सके, उनकी आखरी इच्छा के अनुसार मृतक को सद्गति सम्मलित करे - पूर्ण करे यही अपेक्षितता के लिए मृतक के आसपास खड़े रहते है।

मृतक के मुखमें पंचरत्न क्यों डाला जाता है?

यह एक ऐसी संभवित और वैज्ञानिक द्रष्टि कोण है की मृतक के मुख में पंचरत्न मुख में आरोहित करने का महात्मय पुन:जन्म हेतु अनुसार है की मृतक के शव के नीचे की भूमि पर तिलके सहित कुश बिछानेसे शवकी आधारभूत भूमि उस ऋतुमती नारीके समान हो जाती है, जो प्रसवकी योग्यता रखती है। मृतक के मुखमें पंचरत्न आरोहित बीजवपनके समान है, जिससे आगे जीव की शुभ गति निश्चय होता है।

जिस घर में मृत्यु है या नजदीकी क्षणों में है तो विविध वस्तुओं तिल, लोहा, सुवर्ण, कपास, हिरण्य, धृत, नमक, सप्तधान्य, भूमि एवं गौदान किसलिये दिया जाता है?

तिल - तिल के ज्वलन से उठती अग्नि की ऊर्जा अति शोर्यवान और तेजोमय है जो तत्व इसे स्वीकार करे वह ऊर्जावान और शुद्ध होता है। यह ऊर्जा और शुद्धि उनके कर्म में योग्यता और गति प्रदान करता है।
लोहा - प्राचीन काल में लोहा एक ऐसी धातु थी जो औज़ार और हथियार बनाने के लिए आवश्यक थे। इसके लिए यह दान आवश्यक और रक्षक है।
सुवर्ण - यह धातु कीमती, जीवन निर्वाह, आभूषण परिधान, और कठिन या आपति काल के लिए उपयोगी साधन है। जो भौतिक कष्ट निवारक है।

कपास - मनुष्य जीवन की मुख्य आवश्यक पदार्थो मे एक कपास - जो कपड़े पहनने के लिए और गृह उपयोगी निजी वस्तुओं मे से एक है।

हिरण्य - अति कीमती धातु या सर्व श्रेष्ठ पदार्थ, जो मनुष्य को अधिक से अधिक प्रिय हो ऐसा पदार्थ।

धृत - मध - अति श्रेष्ठ औषधि जो मनुष्य को हर शारीरिक रोग प्रतिरोधक के लिए आवश्यक और उपयोगी है।

नमक - नमक एक ऐसा पदार्थ है जो हर प्रकार के अन्न पकाने और जो अगम्य पदार्थो को भोजन युक्त करने के लिए अति आवश्यक है। साथ साथ कोई ऐसे पदार्थो जो समय अवधि के प्रशच्यात अशुद्ध हो जाते है उनका रक्षण करता है।

सप्तधान्य - सप्त धान्य मिश्रित एक ऐसा धान्य जो सदा पकाने से तृप्ति, निरोगीता, वीर्यता, शांतता बढ़ती है। धान्य से शाश्वत अविनाशी सुख प्रदान होता है।
भूमि - प्राचीन काल में भूमि एक ऐसा साधन था जो मनुष्य जीवन के निर्वाह के लिए अति उपयोगी साधन था। जो सदा के लिए मनुष्य जीवन को सुखमय और सुरक्षित रखता है।

गौ - गाय - सर्व श्रेष्ठ प्राणी यह मृत्यु लोक का - जो सदा के लिए पवित्र, शुद्ध, श्रेष्ठ उपयोगी, श्रेष्ठ औषधि, श्रेष्ठ निर्वाहित साधन, जिसका दूध ब्रह्मांड का अमृत है।

बंधु-बांधव, मित्र, सगा-व्हाला, ज्ञाती बंधु और शत्रु आदि मिलकर क्यों क्षमा-याचना करते है?

'माता पिता, गुरु, भ्राता, भगिनी, पुत्र, पुत्री, पौत्र, प्रप्रोत्र, प्रपोत्री, सगा, समाजी, वैवाहिक संबंधी अर्थात मातृपक्ष - पितृपक्ष, मित्र, पड़ौशी, आदि पोष्य वर्ग है। जो सदा ऋणी है। मृतक का गोत्र और ऋण उनसे कहीं व्यवहार और कर्मो से जुड़े है, यही ऋण और कर्मानुसार बंधन से उन्हें सदा के लिए मुक्ति देने सभी मिलकर क्षमा-याचना करते है।

अग्नि देनेवाले पुत्र और पौत्र मृतक को कंधे पर क्यूँ ले जाते है?

शव यात्रा का नेतृत्व साधारणत: मृतक का पुत्र या प्रमुख शोकार्त संबंधी करता है। नेतृत्व करने वाला व्यक्ति अपने हस्तमें जलती हुई अग्नि के पदार्थ एक मिट्टी की कुंडी में सम्मलित और संभलित करके चलता है, यह अग्नि गार्हपत्य अग्नि से प्रदीप्त हुआ जलता पदार्थ से ही मृतक को मुखाग्नि देना है। मृतक का संस्कार उनके रक्त-संबंधियों से ही हर विधि स्पर्श होने से मृतक को सद्गति प्राप्त होती है। उसके अतिरिक्त व्यक्ति का स्पर्श वो व्यक्ति को बिना कारण मृतक का अशौच स्पर्श और मृतक की गति में कष्ट न हो।

शवमें धृतका लेप क्यों किया जाता है?

शवको स्नान कराके उन्हें धृत और सुवासित - सुगंधित पदार्थो का लेप लगाया जाता है। यह लेप से मृतक के आत्मा को आनंद प्राप्त होता है और उन्हें सुख मिलता है। उन्हें जो लोक में जाना है वहाँ वो अपनी कृति के अनुसार उन्हें योग्य प्रज्वलित आवकार प्राप्त हो। आजकल जो अस्पताल में जिस तरह की परिस्तिथी है उसके मुताबित मृतक के शरीर पर कहीं प्रकार की शस्त्र चिकत्सा होते हुए मृतक को कहीं प्रकार की औषधि युक्त होते हुए उनमें अशुद्धि

पायी जाती है वह दुर्गंध युक्त शरीर को लेप करने से शरीर की सुविधा पूर्वक अंत्येष्टि कर सकते है।
अग्नि-संस्कार एक प्रकार का यज्ञ है और मृतक के शरीर को चंदन, सुगंधित पदार्थो से लेप करके आहूत करना यह शव के दाहक योग्य करने का प्रमाण है।

शवको भूमि स्पर्श किसलिये करवाया जाता है?

जो स्थली पर मृत्यु हुआ है वह भूमि की तुष्टि होने से उनकी पवित्रता के लिए शव के स्पर्श से वह भूमि संतुष्ट होती है, क्यूंकी शव एक ऐसा पिंड हो जाता है जिससे भूमि का पूजन और मंत्र सिद्धता प्राप्त होती है, वास्तुदेवता प्रसन्न होते है।

स्त्रियाँ मृतक के लिये क्यों विलाप करती है?

स्वाभाविक है की कोई अपना - कोई अपने रक्त-संबंधी या कोई कौटुंबिक व्यक्ति हो या कोई अपनी निकट का व्यक्ति हो या कोई परोपकारी व्यक्ति हो या कोई सत्या-पवित्र-शुद्ध जीवन व्यतीत व्यक्ति हो तो उनके लिए विलाप होगा ही। स्त्री यह तो इतना भाव विभोर और दया -करुणा की सागर है जो ऐसी परिस्थिति में वह अपना धैर्य और हिम्मत खो देती है। उन्हें न तो अपना ख्याल रहता है न समय का ख्याल रहता है बस केवल एक नदी की तरह अपने आपको निचोड़ देती है, उनका कल्पांत, उनकी आक्रन्दता, उनकी द्रविता जो निर्लेप होता है। क्यूंकी मृतक उनका विश्वास होता है, सर्वस्व होता है, देव होता है, भगवान होता है।

शवके उत्तर दिशामें मंत्र पाठ क्यों किया जाता है?

मृतक को दक्षिणाभिमुख रखा जाता है, इसिलिए जो भी अंजलि, प्रार्थना, मंत्रोचार उनकी उत्तर क्रिया के लिए करना होता है।

मृत्यु समय सूर्य-बिम्ब-निरीक्षण, पत्थर पर स्थापित यव, सरसों, दूर्वा और नीमकी पत्तियोंका स्पर्श क्यों कराते है?

जब कोई व्यक्ति मृत्यु समीप हो तब उन्हें **सूर्य-बिम्ब-निरीक्षण** करवाना अति आवश्यक है, क्यूंकी हमारी संस्कृति सूर्य उपासक है, जो सूर्य से जन्मे है और आखिर सूर्य में समाना है। तो मृत्यु समीप व्यक्ति को सूर्य-बिम्ब-निरीक्षण से वह योग्य गति प्राप्त कर सकता है।
पत्थर पर स्थापित यव यह पदार्थ ऐसा धान्य है जिससे मनुष्य का मन, तन और धन पवित्र होता है। मृतक की द्रष्टि पड़ने से मृतक में शक्ति और शुद्ध यादों की स्मृति जागृत होती है, जिससे शायद उनकी अंतिम क्षण उमदा हो सकती है।

सरसों भी ऐसी ही चेतना का संचार करती है। जो शायद मृतक को जीवित रहने के लिए आशा की किरण उठाती है।

दूर्वा - एक ऐसी निर्मल, शुद्ध, पवित्र प्राकृतिक वनस्पति है, जिसमे सदा श्री प्रभु का वास रहता है, इसिलिए तो हर एक शुभ संकल्प और क्रिया में इसका उपयोग होता ही है। जिसके स्पर्श से व्यक्ति पावन होती है।

नीमकी पत्तियाँ का रस ऐसी औषधि है, जो कोई भी रोग और भोग को नष्ट करती है। मृत्यु के समीप जो व्यक्ति है उन्हें यह सर्वे तिनका का सहारा जो शायद जीवन बक्ष देता है।

यह सर्वे पदार्थ शुद्ध पवित्र और मांगलिक है।

शवका दाह-संस्कार तथा अन्य संबंधी के साथ जल-तर्पण की क्रिया क्यों की जाती है?

मृतक का संस्कार उनके रक्त-संबंधियों से ही हर विधि स्पर्श होने से मृतक को सद्गति प्राप्त होती है। उसके अतिरिक्त व्यक्ति का स्पर्श वो व्यक्ति को बिना कारण मृतक का अशौच स्पर्श और मृतक की गति में कष्ट न हो। दाह-संस्कार करने के बाद चिताकी प्रदक्षिणा करके सभी आप्तजनों मंत्रोचर करते हुए जलाशय या नदी की ओर जाएँ, जहां अपने पहने हुए वस्त्रों का प्रक्षालन कर - स्नान कर के मृतक व्यक्ति का ध्यान धरते हुए उन्हें जल दान देने की प्रतिज्ञा करें, जल में मौन धरते हुए प्रवेश करके अपनी शिखा खोल कर या अपने शिर को भीगा कर अपसव्य होकर दक्षिणाभिमुख हो कर मंत्रोचर उच्चारण करते हुए स्नान करें।

तत्प्रश्चयात किनारे आ करके अपनी शिखाएँ बांधकर सीधे कुशको दक्षिणाग्र करके दोनों हाथोंमें रखकर अंजलिसे तिलयुक्त जल लेकर पितृतीर्थसे दक्षिण दिशामें एक बार, तीन बार, अथवा दस बार भूमि पर या पत्थर पर जल-दान करें - हे गोत्रमें उत्पन्न आत्मा! तुम मेरे द्वारा दिये जा रहे इस तिलोदकसे संतृप्त हो। तत्प्रश्चयात जलसे निकल कर वस्त्र पहन कर - स्नान वस्त्र निचोड़ कर पवित्र भूमि पर बैठ जाएँ। एक प्रार्थना सभा करके सब मृतक परिवार के घर जाएँ।

दाह-संस्कार के बाद अस्थि-संचयन और क्यों घट फोडनेका होता है?

दाह-संस्कार प्रशच्यात अस्थि-संचयन की विधि है, जो अवशेष और अस्थि का संकलन करके उसका निखात अर्थात विसर्जन आवश्यक है। यह अस्थि विसर्जन विधि में मृतक की प्रधान महिषी करती है - चाहे वो पत्नी हो - पुत्र हो - पति हो।

अस्थि विसर्जन की विधि में अपने हाथों को शुद्ध करके दाह-संस्कार भूमि की भस्म पर मंत्रोचार करके दूध जल का सेचन करके औदुंबर या गूलर के डंडे से अस्थिओ को एकत्रित करना है, यही अस्थिओ को दूध से प्रक्षालन करके एक मिट्टी के पात्र में या कृष्ण-मृगचर्म में रख कर ऐसे सूत्रोचार करना है - यह पंच महाभूत से उठकर नवीन स्वरूप धारण करो, अपनी देह के सर्व अवयवो को समल्लित करके तुम्हें जो लोक जाना चाहो वहाँ जाओ - सविता तुम्हें वहाँ प्रस्थापित करे। यह तुम्हारी अस्थि है तुम ऐश्वर्य में तृतीय से युक्त होओ, सपूर्ण अवयव और अस्थिओ से होकर सुंदर और योग्य बनो, तुम दिव्य लोक में देवों के प्रिय बनो। इसके प्रश्च्यात अग्नि में तीन आहुती देनी है।

यह अस्थि पात्र को अपने हाथों से एक बार दूध और पवित्र जल से धो कर अपने मस्तिस्क और आंखों से लगाकर और राख को इकठठा करके दक्षिण दिशा में रख देना चाहिए। अंत में दाह-संस्कार भूमि को प्रणाम करके प्रस्थान करना है। यही अस्थि कुंभ को शमी वृक्ष की शाखा से बांध दिया जाता है और वहाँ ही यज्ञ का अनुस्थान किया जाता है। उसके बाद यही अस्थिओ को पवित्र नदी में योग्य मंत्रोचार से विसर्जित किया जाता है।

मृतक के कल्याण के लिये क्या करना चाहिए?

मृतक के कल्याण के लिए प्रार्थना, सूक्त मंत्रोचार, अंजलि गीत और शुभ वचनो से वो सद्गति प्राप्त करता है, यही ही सर्व श्रेष्ठ सर्वे का कर्तव्य से उनका कल्याण होता है।

मृत्यु और स्मशान भूमि तक पहुंचनेकी कौन-सी विधि अपेक्षित है?

जो शांत या मृत्यु पायी गयी व्यक्ति घर में हो या अस्पताल में से लाये हो, प्रथम उन्हें स्नान कराया जाता है, स्नान के बाद नवीन वस्त्रों और सुगंधित औषधियो का लेप कर जो भूमि को जल - मिट्टी - तिल - गोबर और कृष अर्थात सूखे घास की मृत्यु शैय्या - जो दक्षिणोन्मुख या उतरोन्मुख दिशा की ओर शारीरिक अवस्था बना कर उन पर सुला दिया जाता है, उनके दोनों पैर के अंगूठे को या पंजे को सुतली से बांध दिया जाता है, मृतक के दोनों हाथों के पंजे में तुलसी पत्ति रखनी है, मृतक को दूसरे वस्त्र से आच्छादित करके उनकी कुंकुम और अक्षत से पूजन करके पुष्पोंकी माला और पुष्पों से विभूषित करके मृतक की अर्थी रचानी होती है।

सिर के नजदीक एक अखंड दीपक प्रज्वलित करना है। यह गार्हपत्य अखंड दीपक मृतक व्यक्ति के कुटुंब की ज्योति है - तेज है - अग्नि है। उसके प्रश्चयात उसके समीप वेद और अपने धर्म अनुसार मंत्र जाप करना आवश्यक है।

गोबर भूमिकों सबसे पहले लीपना चाहिए, तदनंतर उसके ऊपर तिल और कुश बिछाना चाहिए, जिससे भूमि पवित्र और शुद्ध हो जाती है, जो मंडलन भूमि कहा जाती है - जो भूमि पर केवल देवताए बिराजते है - ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, लक्ष्मी आदि देवगण हो, जिससे मृतक की सद्गति होती है। तिल बहोत पवित्र है - तिल बिछाने से असुर, दानव, दैत्य और अशुद्ध तत्वों दूर हो जाते है, जिससे शुद्धता प्रकट होती है। कुश पवित्र प्रकृति है - वनस्पति है, जो सदा शुद्ध और पवित्र है। यह सर्वे पदार्थ मुक्तिदायिनी है। इसीलिए यही सर्व पदार्थ आवश्यक है।

उसके बाद आतुर या मृतक व्यक्ति को सुला देना चाहिए, जिससे वह मृतक सर्व दोषों से मुक्त हो जाता है।

घर के जो दूसरे सभ्यों है उनमें से स्त्रियों को घर का रसोईघर में जो पका हुआ जो भी खाद्य पदार्थों है उन्हें तुरंत अखाद्य समझ कर उनका निकाल करना है, हर एक कमरे में हर

चददर और कपड़ों को धुलाई के लिए इकट्ठा करना है अर्थात घर को साफ सुधरा - शुद्ध कर देना है।

जो बुजुर्ग महिलाएं है उन्हें अपने धर्म की रीत अनुसार तुलसी की पत्तियाँ, गंगाजल, यमुनाजल, नर्मदाजल, सुवर्ण या इत्यादि धातु आदि जो पवित्र और शुद्ध मानते है वह सब पदार्थ इकट्ठा कर के एक पात्र में रखना है, व्यक्ति की जनोई, कंठी, माल्याए, कपड़े, गहने, और तीन पिंड की व्यवस्था करनी है - प्रथम पिंड जिस जगह मृतक को सुलाया है वहाँ एक पिंड दान - दूसरा आधे मार्ग में दान करना है और तीसरा आखरी चिता पर दान करना है साथ साथ जो ध्यान में आवे आदि की योग्य व्यवस्था करनी है।

गौत्र कर्मकांडी ब्राह्मण अर्थात सामाजिक गौर ब्राह्मण को तुरंत बुलाकर उनसे सलाह मशवरा करके योग्य विधि और नियमों को अनुसरते अंतिम पूजा विधि करनी है। गौर ब्राह्मण निर्देशित जो जो सामग्री और संस्कार विधि रीत निभानी ही है। साथ साथ जो स्मशान स्थली में मृतक का दाह संस्कार करना है वहाँ चिता का निर्माण और चंदन, तुलसी और पलाश लकड़ी से तैयार करने अवगत कर दिया जाय।

मृतक का संस्कार उनके रक्त-संबंधियों से ही हर विधि स्पर्श होने से मृतक को सद्गति प्राप्त होती है। उसके अतिरिक्त व्यक्ति का स्पर्श वो व्यक्ति को बिना कारण मृतक का अशौच स्पर्श और मृतक की गति में कष्ट न हो। दाह-संस्कार करने के बाद चिताकी प्रदक्षिणा करके सभी आप्तजनों मंत्रोचर करते हुए जलाशय या नदी की ओर जाएँ।

चितामें शवको अग्निर्पण करने की क्या विधि है?

हिन्दु शास्त्रोक्त प्रणाली अनुसार मृतक के शरीर को दाह अर्थात अग्नि को समर्पित करते है उसका यथा योग्य और संस्कृत संस्कार कारण एक ही - यह अंतिम संस्कार को हिन्दु धर्म संस्थापन समाज यह संस्कार को यज्ञ समझती है। वैज्ञानिक सिद्धांत है - जो सर्व ज्ञानी, वैज्ञानी, प्रज्ञानी ने योग्य ठहराया है की जो भी कोई शक्ति है वह आकाश की ओर या हमारी उपर है।

इसीलिए सर्व जो भी आत्मीय प्रार्थना या नमन क्रिया करते है, तो सदा उपर की ओर ही अपने सर्व श्रेष्ठ हृदयस्थ को स्वीकार करते है। तो हमारी हिंदु संस्कृति प्रणाली में अग्नि दाह में जो अंतिम दाह क्रिया का अग्नि उपर की ओर ही उठता है जो हम सर्वे गर्व से समझते ही है की हमारा आत्मीय व्यक्तित्व ने ब्रह्मत्व पाया, सद्गति पायी, परमात्मा से एक हुआ।

यही तो श्रेष्ठता है हमारे संस्कार की, हमारी धर्मता की, हमारी वैज्ञानिकता की। हमारे सर्व श्रेष्ठ ऋषिओ, महर्षिओ, वेदांतिओ, और श्रेष्ठीओ जो सदा अग्नि के उपासक थे और है, जिन्होने सिद्ध किया है अग्नि सत्य, विशुद्ध, पवित्र और सर्व मूल तत्वों में श्रेष्ठ है। हमें भी यही परम तत्व पाना है।

इसीलिए हर योग्य क्रिया में अग्नि को प्रज्वल्लित करके ही उन्हें साक्षी समझते ही, उन्हें तेजोमय करते ही हमारी और हमारी आसपास की सारी नकारात्मा को नष्ट करके ही योग्यता प्रदान करनी है।
दाह क्रिया स्थली को मार्जन और शुद्ध करके पुष्प अक्षत आदि से अग्नि देव की पूजा करके मंत्र से अग्नि की प्रार्थना करनी चाहिए

त्वं भूत्कृज्जगध्योने त्वं लोकपरिपालकः ।।

उपसंहार कस्तस्मादेनं स्वर्ग मृतं नय ।

जब शरीर का आधा भाग अग्नि देव ग्रह ले उसी समय मुखाग्नि क्रिया करने वाली व्यक्तिको मृतक को सुख की प्राप्ति प्रदान करने के लिये मंत्र का उच्चारण करना चाहिए

अस्मात त्वमधिजातोसी त्वदयं जायातां पुनः ।।

'असौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहा ज्वलितपावक।।

पंचक काल में मृत्यु होने पर दाह-संस्कार की क्या विधि है?

मास के प्रारंभ में घनिष्ठा नक्षत्रके अर्धभाग से लेकर रेवती नक्षत्र तक पंच काल होता है। इसको सदैव दोषपूर्ण एवं अशुभ मानना चाहिए। इस काल में मृतक का दाह-संस्कार उचित नहीं है। यह काल सभी प्राणीओ में दु:ख उत्पन्न करने वाला है। पंच काल में मृतकके सभी कर्म करने वाले पुत्र और सगोत्र को कष्ट ही होता है। अगर ऐसे मृतक के लिए दाह-संस्कार के लिए योग्य विधि करने से मृतक के समीप पुत्र और सगोत्र का कष्ट दूर हो सकता है। विधि पूर्वक मंत्रोच्चार करके मृतक के शव के शवस्थान समीप कुश के चार पुतलक बनाकर नक्षत्र मंत्रोसे उनको अभीमंत्रित करके रख दे, तदनंतर उन्हीं पुतलको के साथ मृतक दाह-संस्कार करे।

मृत्यु पर्यांत

अगर जैसे ही हमनें ऐसा सुना या कहा कि घर में कोई शांत हो गया है या किसीकी मृत्यु हुई है,। तुरंत एक पल के किये खुद को एकचित हो कर अपने आप को संभल ली जिये, साथ जो अपने घर में ऐसे व्यक्तियों है उन्हें संभालिए और सब एक जुट हो कर शांति धरिये। धीरे धीरे सांत्वना पा कर एक दूजे को संभल कर खुद की जिम्मेदारी की तरफ अपना मन को एकाग्र कर के सबके साथ बात करतें करतें हर एक को अपनी जिम्मेदारी सौंपते हुए समय और परिस्तिथि को काबू में रख कर धीरे धीरे अंतिम संस्कार की विधि और योग्यता की तरफ सबको एक जुट करते जाईये।

प्रथम: शास्त्रोक्त अनुसार पुन:जीवित के लिए मंत्रोच्चार करते है - मान्यता है। अगर सफलता नहीं पायी तो अन्त्येष्टि क्रियाएँ का आरंभ किए जाता है।

प्रथम चरण मृत्यु के तुरंत बाद

जो शांत या मृत्यु पायी गयी व्यक्ति घर में हो या अस्पताल में से लाये हो,

प्रथम मृतकको स्नान कराया जाता है, स्नान के बाद

मृतकको नवीन वस्त्रों और सुगंधित औषधियो का लेप कर उन्हें तैयार किया जाता है

जो भूमि पर उन्हें सुलाना है वह भूमि को जल - मिट्टी - तिल - गोबर और कृष अर्थात सूखे घास की मृत्यु शैय्या तैयार किया जाता है

जो दक्षिणोन्मुख या उतरोन्मुख दिशा की ओर शारीरिक अवस्था बना कर उन पर सुला दिया जाता है,

उनके दोनों पैर के अंगूठे को या पंजे को सुतली से बांध दिया जाता है,

मृतक के दोनों हाथों के पंजे में तुलसी पत्ति रखनी है,

मृतक को दूसरे वस्त्र से आच्छादित करके उनकी कुंकुम और अक्षत से पूजन करके पुष्पोंकी माला और पुष्पों से विभूषित करके मृतक की अर्थी रचानी होती है।

सिर के नजदीक एक अखंड दीपक प्रज्वलित करना है। यह गार्हपत्य अखंड दीपक मृतक व्यक्ति के कुटुंब की ज्योति है - तेज है - अग्नि है।

घर के जो दूसरे सभ्यों है उनमें से स्त्रियों को घर का रसोईघर में जो पका हुआ जो भी खाद्य पदार्थों है उन्हें तुरंत अखाद्य समझ कर उनका निकाल करना है, हर एक कमरे में हर चददर और कपड़ों को धुलाई के लिए इकट्ठा करना है अर्थात घर को साफ सुधरा - शुद्ध कर देना है।

जो बुजुर्ग महिलाएं है उन्हें अपने धर्म की रीत अनुसार तुलसी की पत्तियाँ, गंगाजल, यमुनाजल, नर्मदाजल, सुवर्ण या इत्यादि धातु आदि जो पवित्र और शुद्ध मानते है वह सब पदार्थ इकट्ठा कर के एक पात्र में रखना है,

मृतकको अपनी गृह संस्कार और प्रणाली अनुसार उन्हें जनोई, कंठी, माल्याए, कपड़े, गहने, आदि से तैयार करना है

तीन पिंड की व्यवस्था करनी है - प्रथम पिंड जिस जगह मृतक को सुलाया है वहाँ एक पिंड दान - दूसरा आधे मार्ग में दान करना है और तीसरा आखरी चिता पर दान करना है साथ साथ जो ध्यान में आवे आदि की योग्य व्यवस्था करनी है।

गौत्र कर्मकांडी ब्राह्मण अर्थात सामाजिक गौर ब्राह्मण को तुरंत बुलाकर उनसे सलाह मशवरा करके योग्य विधि और नियमों को अनुसरते अंतिम पूजा विधि करनी है। गौर

ब्राह्मण निर्देशित जो जो सामग्री और संस्कार विधि रीत निभानी ही है। साथ साथ जो स्मशान स्थली में मृतक का दाह संस्कार करना है वहाँ चिता का निर्माण और चंदन, तुलसी और पलाश लकड़ी से तैयार करने अवगत कर दिया जाय।

उसके प्रश्चयात उसके समीप वेद और अपने धर्म अनुसार मंत्र जाप करना आवश्यक है।

जो जो विधि और संस्कार का महात्म्य

१. गौत्र श्लोक या मंत्र का उच्चारण करे

हमारी हिंदु संस्कृति या धर्म आधारित प्रथम **गायत्री मंत्र** का उच्चारण किया जाय जो हमारा गौत्र मंत्र है - **३ बार**

ॐ ॐ भूर् भुवः स्वः।
तत् सवितुर्वरेण्यं।
भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

२. हमारे दीक्षा मंत्र का उच्चारण किया जाय
जो जो धर्म से जुड़े है उसका दीक्षा मंत्र अवश्य है - **एक बार**

३. हमारे सनातन धर्म के मंत्र का उच्चारण किया जाय
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। **३. बार**

४. हमारे शरणागत मंत्र का उच्चारण किया जाय
श्री कृष्ण शरणं मम:
श्री कृष्ण शरणं मम:
श्री कृष्ण शरणं मम: **१०८ बार**

५. पुष्टि मार्गीय व्यक्ति हो तो

मंगलाचरण

चिन्ता सन्तान हन्तारो यत्पादांबुज रेणवः।
स्वीयानां तान्निजार्यान प्रणमामि मुहुर्मुहुः ॥१॥

यदनुग्रहतो जन्तुः सर्व दुःखतिगो भवेत ।
तमहं सर्वदा वंदे श्री मद वल्लभ नन्दनम॥२॥

अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानान्जनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरुवै नमः ॥३॥

नमामि हृदये शेषे लीलाक्षीराब्धिशायिनम ।
लक्ष्मी सहस्त्रलीलाभिः सेव्यमानं कलानिधिम॥४॥

चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च त्रिभिस्तथा ।
षडभिर्विराजते योऽसौ पंचधा हृदये ममः ॥५॥

॥इति श्री मंगलाचरण संपूर्णम॥

॥श्रीमदाचार्य चरण कमलेभ्य नमः॥

श्री यमुनाष्टकम पाठ स्मरण १ बार

नमामि यमुनामहं सकल सिद्धि हेतुं मुदा
मुरारि पद पंकज स्फुरदमन्द रेणुत्कटाम ।

तटस्थ नव कानन प्रकटमोद पुष्पाम्बुना
सुरासुरसुपूजित स्मरपितुः श्रियं बिभ्रतीम ॥१॥

कलिन्द गिरि मस्तके पतदमन्दपूरोज्ज्वला
विलासगमनोल्लसत्प्रकटगण्ड्शैलोन्नता ।

सघोषगति दन्तुरा समधिरूढदोलोत्तमा
मुकुन्दरतिवर्द्धिनी जयति पद्मबन्धोः सुता ॥२॥

भुवं भुवनपावनीमधिगतामनेकस्वनैः
प्रियाभिरिव सेवितां शुकमयूरहंसादिभिः ।

तरंगभुजकंकण प्रकटमुक्तिकावाकुका-
नितन्बतटसुन्दरीं नमत कृष्णतुर्यप्रियाम ॥३॥

अनन्तगुण भूषिते शिवविरंचिदेवस्तुते
घनाघननिभे सदा ध्रुवपराशराभीष्टदे ।

विशुद्ध मथुरातटे सकलगोपगोपीवृते
कृपाजलधिसंश्रिते मम मनः सुखं भावय ॥४॥

यया चरणपद्मजा मुररिपोः प्रियं भावुका
समागमनतो भवत्सकलसिद्धिदा सेवताम ।

तया सह्शतामियात्कमलजा सपत्नीवय-
हरिप्रियकलिन्दया मनसि मे सदा स्थीयताम ॥५॥

नमोस्तु यमुने सदा तव चरित्र मत्यद्भुतं
न जातु यमयातना भवति ते पयः पानतः ।

यमोपि भगिनीसुतान कथमुहन्ति दुष्टानपि
प्रियो भवति सेवनात्तव हरेर्यथा गोपिकाः ॥६॥

ममास्तु तव सन्निधौ तनुनवत्वमेतावता
न दुर्लभतमारतिर्मुररिपौ मुकुन्दप्रिये ।

अतोस्तु तव लालना सुरधुनी परं सुंगमा-
त्तवैव भुवि कीर्तिता न तु कदापि पुष्टिस्थितैः ॥७॥

स्तुति तव करोति कः कमलजासपत्नि प्रिये
हरेर्यदनुसेवया भवति सौख्यमामोक्षतः ।

इयं तव कथाधिका सकल गोपिका संगम-
स्मरश्रमजलाणुभिः सकल गात्रजैः संगमः ॥८॥

तवाष्टकमिदं मुदा पठति सूरसूते सदा
समस्तदुरितक्षयो भवति वै मुकुन्दे रतिः ।

तया सकलसिद्धयो मुररिपुश्च सन्तुष्यति
स्वभावविजयो भवेत वदति वल्लभः श्री हरेः ॥९॥

॥ इति श्री वल्लभाचार्य विरचितं यमुनाष्टकं सम्पूर्णम ॥

क्यूँकि वह व्यक्ति की श्री माताजी स्वरूप है श्री यमुनाजी, और श्री यमराजजी उनके भ्राता के नाते हमारा परिभ्रमण योग्य लोक में थाय।

कृष्णाश्रय

सर्वमार्गेषु नष्टेषु कलौ च खल धर्मिणि ।
पाष्ण्डप्रचुरेलोके कृष्ण एव गतिर्मम ॥१॥

म्लेच्छाक्रान्तेषुदेशेषु पापैकनिलयेषुचः।
सत्पीडा व्यग्रलोकेषु कृष्ण एव गतिर्मम ॥॥

गंगादितीर्थ वर्येषु दुष्टैरेवा वृतेस्विह ।
तिरोहिताधिदेवेषु कृष्ण एव गतिर्मम ॥३॥

अहंकार विमुढेषु सत्सु पापानुवर्तिषु ।
लाभपूजार्थयत्नेषु कृष्ण एव गतिर्मम ॥४॥

अपरिज्ञाननष्टेषु मन्त्रेष्वव्रतयोगिषु ।
तिरूहितार्थवेदेषु कृष्ण एव गतिर्मम ॥५॥

नानावाद विनष्टेषु सर्वकर्मव्रतादिषु ।
पाषण्डेकप्रयत्नेषु कृष्ण एव गतिर्मम ॥६॥

अजामिलादिदोषाणां नाशको नुभवे स्थितः ।
ज्ञापिताखिल माहात्म्यः कृष्ण एव गतिर्मम ॥७॥

प्राकृताः सकल देवा गणितानन्दकं बृहत ।
पूर्णानन्दो हरिस्तस्मातकृष्ण एव गतिर्मम ॥८॥

विवेक धैर्य भक्त्यादि रहितस्य विशेषतः ।
पापासक्तस्य दीनस्य कृष्ण एव गतिर्मम ॥९॥

सर्व सामर्थ्यसहितः सर्वत्रैवाखिलार्हकृत ।
शरणस्थ्समुद्धारं कृष्णं विज्ञापयाम्यहम ॥१०॥

कृष्णाश्रयमिदं स्तोत्रं यः पठेत कृष्णसन्निधौ ।
तस्याश्रयो भवेत कृष्ण इति श्री वल्लभोब्रवीत ॥११॥

॥ इति श्री वल्लभाचार्यविरचितः कृष्णाश्रय सम्पूर्णः ॥

नवरत्नं

चिन्ताकापि न कार्या निवेदितात्मभिः कदापीति।
भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गतिम ॥१॥

निवेदनण तु स्मर्त्तव्यं सर्वथा ताहृशैर्जनैः।
सर्वेश्वर्श्च सर्वात्मा निजेच्छातः करिष्यति ॥२॥

सर्वेषां प्रभु संबंधो न प्रत्येकमिति स्थितिः ।
अतोऽय विनियोगेऽपि चिन्ता का स्वस्य सोऽपिचेत ॥३॥

अज्ञानादथवा ज्ञानात कृतमात्म निवेदनम ।
यैः कृष्णसात्कृतप्राणैस्तेषां का परिदेवना ॥४॥

तथा निवेदने चिन्ता त्याज्या श्री पुरुषोत्तमे ।
विनियोगेऽपि सा त्याज्या समर्थो हि हरिः स्वतः ॥५॥

लोके स्वास्थ्यं तथा वेदे हरिस्तु न करिष्यति ।
पुष्टिमार्गस्थितो यस्मात साक्षिणो भवता खिलाः ॥६॥

सेवाकृतिर्गुरोराज्ञाऽबाधनं वा हरोच्छया ।
अतः सेवा परं चित्तं विधाय स्थीयतां सुखम ॥७॥

चित्तोद्वेगं विधायापि हरिर्यद्यत करिष्यति ।
तथैव तस्य लीलेति मत्वा चिन्तां द्रुतं त्यजेत ॥८॥

तस्मात्सर्वातमना नित्यं श्री कृष्णः शरणं मम ।
वदद्भिरेव सततं स्थेयमित्येव मे मति ॥९॥

॥इति श्री वल्लभाचार्य विरचितं नवरत्नं समाप्तं॥

सिद्धांतमुक्तावली

नत्वा हरिं प्रवक्ष्यामि स्वसिद्धांत विनिश्चयम।
कृष्ण सेवा सदा कार्या मानसी सा परा स्मृता॥१॥

चेतस्तत्प्रवणं सेवा तत्सिच्द्धयै तनुवित्तजा।
ततः संसारदुःखस्य निवृत्तिर्ब्रह्मबोधनम॥२॥

परं ब्रह्म तु कृष्णो हि सच्चिदानंदकं बृहत।
द्विरूपं तद्वि सर्वं स्यादेकं तस्माद्विलक्षणम॥३॥

अपरं तत्र पूर्वस्मिन वादिनो बहुधा जगुः।
मायिकं सगुणं कार्यं स्वतंत्र चेति नैकधा॥४॥

तदेवैतत्प्रकारेण भवतीति श्रुतेर्मतम।
द्विरूपं चापि गंगावज्ज्ञेयं सा जलरूपिणी॥५॥

माहात्म्यसंयुता नृणां सेवतांभुक्तिमुक्तिदा।
मर्यादामार्गविधिना तथाब्रह्मापि बुद्ध्यताम॥६॥

तत्रैव देवतामूर्तिर्भक्तया या दृश्यते क्वचित।
गंगायांच विशेषेण प्रवाहाभेदबुद्धये॥७॥

प्रत्यक्षा सा न सर्वेषां प्राकाम्यं स्यात्तया जले।
विहिताच्च फलात्तद्धि प्रतीत्यापि विशिष्यते॥८॥

यथा जलं तथा सर्वं यथा शक्ता तथा बृहत।
यथा देवी तथा कृष्णस्तत्राप्येतदिहोच्यते॥९॥

जगत्तु त्रिविधं प्रोक्तं ब्रह्मविष्णुशिवास्ततः।
देवतारूपवत्प्रोक्ता ब्रह्मणीत्थं हरिर्मतः॥१०॥

कामचारस्तु लोकेस्मिन्ब्रह्मादिभ्यो न चान्यथा ।
परमानन्दरूपे तु कृष्णे स्वात्मनि निश्चयः॥११॥

अतस्तु ब्रह्मवादेन कृष्णे बुद्धिर्विधीयताम।
आत्मनि ब्रह्मरूपे हि छिद्रा व्योम्नीव चेतनाः॥१२॥

उपाधिनाशे विज्ञाने ब्रह्मत्वत्वावबोधने।
गंगातीरस्थितो यद्वदेवतां तत्र पश्यति॥१३॥

तथा कृष्णं परं ब्रह्म स्वस्मिन ज्ञानी प्रपश्यति।
संसारी यस्तु भजते स दूरस्थो यथा तथा॥१४॥

अपेक्षित जलादीनामभावात्तत्र दुःखभाक।
तस्माच्छ्रीकृष्णमार्गस्थो विमुक्तः सर्वलोकतः॥१५॥

आत्मानंदसमुद्रस्थं कृष्णमेव विचिन्तयेत।
लोकार्थी चेदभजेत कृष्णं क्लिष्टो भवति सर्वथा॥१६॥

क्लिष्टोपि चेदभजेत कृष्णं लोको नश्यति सर्वथा।
ज्ञानाभावे पुष्टिमार्गी तिष्ठेत पूजोत्सवादिषु॥१७॥

मर्यादस्थस्तु गंगायां श्रीभगवततत्परः।
अनुग्रहः पुष्टिमार्गे नियामक इति स्थितिः॥१८॥

उभयोस्तु क्रमेणैव पूर्वोक्तैव फलिष्यति।
ज्ञानाधिको भक्तिमार्ग एवं तस्मान्निरूपितः॥१९॥

भक्तयभावे तु तीरस्थो यथा दुष्टैः स्वकर्मभिः।
अन्यथाभावनापन्नस्तस्मात्स्थानाच्च नश्यति॥२०॥

एवं स्वशास्त्रसर्वस्वं मया गुप्तं निरूपितम।
एतदवुध्वा विमुच्येत पुरुषः सर्वसंशयात॥२१॥

॥इति श्री वल्लभाचार्य विरंचिता सिद्धांतमुक्तावली सम्पूर्ण॥

आप सर्वव्यापक हो सर्वज्ञ हो
सर्वशक्तिमान हो सर्वान्तर्यामी हो
हमें उदारता समदर्शिता समता दो
श्रद्धा भक्ति करुणा दो
हमें आध्यात्मिक अंत:शक्ति दो
हम वासना दमन मन विजयी हो
हम अहंकार काम क्रोध द्वेष मुक्त हो
हमारा जीवन दिव्य गुणी हो
सर्वे नाम रूप टूज दर्शन
सर्वे कर्मो से तुज सेवा
सदा तुज स्मरण रहे सदा तुज रटन रहे
सदा तुज पुकारे सदा तुज में स्थिर

त्वमेव माता च पिता तुम ही हो
त्वमेव बंधुश्च सखा तुम ही हो
त्वमेव विद्या द्रविणम तुम ही हो
त्वमेव सर्व मम देव तुम ही हो
कायेन वाचा मन सेन्द्रियैर्वा बुद्धयात्मना वा प्रकृतै स्वभावात
करोमि यध्यत्सकलम परस्मै नारायणायेती समर्पयामि
नारायणायेती समर्पयामि नारायणायेती समर्पयामि।।

ॐ पूर्णमद: पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुद्च्यते:
पूर्णस्य पूर्ण मादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।
ॐ शांति; शांति: शांति:!

उसके प्रश्चयात <u>मृतककी अर्थी</u> तैयार करनी होती है - यह अर्थी बांस के लकड़ी की होती है पर आजकल धातु की अर्थी तैयार ही होती है। यह अर्थी का पूजन करके अर्थी एक मृतक वाहिनी में परिवर्तित किया जाय, यह मृतक वाहिनी की चारों हथ्थे पर चार श्रीफल बांधना है - यह चारों श्रीफल मृतककी कक्षा का प्रतीक है, जो श्मशान भूमि में वह चारों श्रीफल को यही अर्थी की लकड़ी से फोड़ कर एक धार्मिक विधि करनी होती है। यह विधि का तात्पर्य है की मृतक को मोक्ष मिले। यह श्रीफल फोड़ने की सूक्ष्मता इतनी श्रेष्ठ है जो मृतक को मोक्ष प्रदान करता है, यह श्रीफल मृतक के कर्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय, प्राण, अंत:करण चतुष्टिय अंत:करण, तन मात्रा, अविध्या, काम, और कर्म से सूक्ष्म और कारण शरीर है उनका प्रतीक है जो एक एक करके फोड़ने से जो यह संसार से जुड़े हर ऋण से वह मुक्त होता जाता है।

८. मृत व्यक्ति के प्रथम निकट की अंजली - धीरे धीरे सबकी अंजली - हर अंजली में अंजली देणार व्यक्ति मृतक व्यक्ति को अपनी निकटता के अनुसार अपना व्यक्तव्य कहता है।

९. जो मृतक का प्रथम निकट व्यक्ति है वह निर्देशित करता है कोनसी भूमि पर अग्निदाह करना है और सर्वे को नमन करके सर्वे की आज्ञा स्वीकार कर स्मशान भूमि के लिए सर्वे के साथ चल पड़ता है - स्मशान यात्रा।
यह स्मशान यात्रा में सर्वे यात्री की पैदल ही चलना है और आवश्यक हो तो मृतक को पालकी - रथ - शब वाहिनी में योग्यता पूर्वक आयोजित करके यात्रा का आरंभ करना है।

यहां निवेदन है - न किसीको आक्रंद करना है - रोना है - चिल्लाना है। बस केवल - राम बोलो भाई राम - राम बोलो भाई राम का ही उच्चारण करते करते चल पड़ना है एक योग्य यात्री की तरह - मृतक को सन्मान से आखरी बिदाई देनी है एक जागृत व्यक्तित्व की तरह। यात्रा में फूलों बरसाना - अबिल गुलाल उडाना
१०. प्रथम विश्राम स्थान - चौराहा - पिंड सहराना
११. द्वितीय विश्राम स्थान - गुरु द्वार
१२. तृतीय विश्राम स्थान - निज मंदिर द्वार
१३. आखरी स्थान - मुक्ति द्वार - पिंड सहराना
१४. मृत्यु शैया - विधि करना
अंतिम अर्थात आखरी अर्थात पूर्णता।
हमारा हेतु केवल सदगत आत्मा को सदगति और शांति मिले और जो निष्ठा से जीवन जिया वही निष्ठा से सर्वे कुटुंबी जनों, ज्ञाति बंधुओं और सगा स्नेहीजनों की सही श्रधांजलि पाये यही ही प्रार्थना सह यह प्रकाशित किया है।

न कोई कर्मकांडी ब्राह्मण या गौत्र गौर का निरच्छेद हेतु लक्ष्य है। ये तो जीवन के सोलह संस्कार के प्रति जागृतता जगाने हेतु ही यह विचार चिंतन प्रकाशित किया है।

यह संस्कार क्रिया और विधि हम समझते ही करेंगे तो ही हमारे कौटुम्बिक व्यक्ति की आत्मीय सदगति होगी। इनमें न कोई डर, न कोई अंधश्रद्धा, न कोई तंत्र या न कोई अविद्या है।

यह विधि का प्रमाण और सातत्यता कि अनुभूति हर एक कौटुम्बिक व्यक्ति को अवश्य होगी ही होगी।

यह विधि विज्ञान है सैद्धान्तिक है और धर्म निरपेक्ष है, जो कोई भी अपने आप या अपने गौर या अपने ब्राह्मण शास्त्री से करवा सकता है।

यह विज्ञान का, सिद्धांत का और धर्म निरपेक्षता का कहीं प्रमाण हमने जाने भी है, सुने भी है, पढ़े भी है और समझे भी है।

राजा भर्तुहरि – जिन्होंने खुद तपश्चर्या करके श्री गंगाजी का अवतरण करके सारे पूर्वजों की सदगति की थी।

भगवान राम – जिन्होंने वन में ही श्राद्ध विधि करके अपने पिताश्री की सदगति की थी।

न मे मृत्युशंका न मे जातिभेदो

पिता नैव मे नैव माता न जन्म।

न बंधुर्नमित्रम गुरुनैरव शिष्य:

चिदानंद रूप: शिवोऽहं शिवोऽहं।।

निवेदन – यह पुस्तक पुरी तरह से समझ कर समय के क्रमानुसार योग्यता पूर्वक विधि करना आवश्यक है।

"जय श्री कृष्ण"

मोक्ष संस्कार के लिए सामग्री

देशी घी	दाभ	तुलसी
लाल चंदन	मखाने	यमुना
जल		पतासे
नारियेल	नर्मदा जल	
पंचरत्न	गोबर	मिट्टी
शृंगार	कुश	दूर्वा
शॉल	नीम की पत्तियाँ	नमक
लोभान	सप्त धान्य	धृत
मटका	हिरण्य	
कपास		
गौमूत्र	लोहा	
सुवर्ण		मुरमुरा
जौ	तिल	

चावल बांस सुपारी
अबील
गुलाल कलावा
मिठाई जनेऊ गुलाब
जल

सुतली सफ़ेद कापड़
नाड़ाछड़ी

दिवासली फूल हार जौ का
लॉट

रुई अगरबत्ती
कपूर

धूपबत्ति शहद
गंगाजल

गुगल पीली सरसों राल

चंदन पाउडर चीनी
रोली